25 सहजानन्द शास्त्रमाला

धार्मिक स्फुट ज्ञान पूर्वार्द्ध

लेखक :

अध्यात्मयोगी न्यायतीर्थ पूज्य श्री १०५ क्षु०

मनोहर जी वर्णी 'सहजानन्द' जी महाराज

सम्पादक :

नानक चन्द जैन

सान्तौल हाऊस, मौ० ठठेरवाड़ा, मेरठ

दूरभाष : २२०५५

प्रकाशक :

मन्त्री

सहजानन्द शास्त्रमाला

रणजीतपुरी, सदर, मेरठ-२५० ००१

दिसम्बर सन १९९३

मूल्य एक रुपया

परमात्म आरती

(प्रत्येक धार्मिक शिक्षालय में – सामूहिक प्रार्थना के लिये ।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाण, णमो आइरियाणं ।

णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं ।।

ॐ जय जय अविकारी ।

जय जय अविकारी, स्वामी जय जय अविकारी ।

हितकारी भयकारी, शाश्वत स्वविहारी । ॐ ।। टेक ।।

काम क्रोध मद लोभ न माया, सरस सुखधारी ।

ध्यान तुम्हारा पावन, सकल क्लेशहारी । ॐ ।। १ ।।

हे स्वभावमय जिन तुम चीना भव संतति टारी ।

तुव भूलत भव भटकत, सहत विपति भारी । ॐ ।। २ ।।

परसंबंध बंध दुख कारण, करत अहित भारी ।

परम ब्रह्मका दर्शन, चहुँगति दुखहारी । ॐ ।। ३ ।।

ज्ञानमूर्ति हे सत्य सनातन, मुनि मन संचारी ।

निर्विकल्प शिवनायक, शुचि गुन भंडारी । ॐ ।। ४ ।।

बसो बसो हे सहज ज्ञानधन, सहज शान्तिचारी ।

टलैं टलैं सब पातक, परबल बलधारी । ॐ ।। ५ ।।

प्रकाशकीय

प्रिय पाठक बन्धुओं ! बहुत दिन से यह आवश्यकता अनुभव की जा रही थी कि विद्यार्थी जनों के धार्मिकअध्ययन के लिए ऐसे कोर्स व परीक्षालय का प्रबन्ध बने जिससे विद्यार्थियों को प्रथमानुयोग, चरणानुयोग, करणानुयोग, द्रव्यानुयोग व धार्मिक स्फुट विषयों का परिज्ञान बने। हर्ष की बात है कि इसकी पूर्ति के लिये अब भारतवर्षीय दि० जैन आत्मविज्ञान परीक्षा बोर्ड की स्थापना हो गई है। इसका वर्तमान कार्यालय सदर मेरठ में है। उसी कोर्स के प्रसंग में इस पुस्तक का प्रकाशन किया गया है। आशा है प्रत्येक धर्मशिक्षालय आत्मविज्ञान परीक्षा बोर्ड के पाठ्य क्रम का उपयोग कर ज्ञान प्रभावना बढ़ावेंगे।

प्रकाशक

विषय सूची

क्रम सं० पाठ	पेज नं०
१- दर्शन विधि	३
२- विनय व्यवहार	३
३- भगवान श्री आदिनाथ	५
४- भगवान महावीर	६
५- भगवान श्री रामचन्द्र जी	८
६- पूजन विधि	१०
७- सिद्ध क्षेत्रों का सहेतुक ज्ञान	१२
८- भगवान श्री नेमिनाथ	१३
९- भगवान श्री पार्श्वनाथ	१५
१०- राजा श्रेणिक	१६
११- दान विधि	१८
१२- आहारपान शुद्धि	२०
१३- कोटिभट श्रीपाल	२१
१४- सुकुमाल	२३
१५- षोडष संस्कार	२४
१६- जैन पर्वों का सहेतुक ज्ञान	२७
१७- समन्त भद्राचार्य	२९

दर्शन विधि

घर में नहा धोकर सूती वस्त्र पहन कर जमीन को देखते हुए कि किसी जीव की हिंसा न हो जाए, नंगे पैर मन्दिर की ओर गमन करें फिर वहाँ पर जल से हाथ पैर धोकर ॐ जय जय जय निःसहि निःसहि निःसहि कहता हुआ प्रभुमूर्ति के निकट पहुँचे।

प्रभुमूर्ति के सामने बाँई ओर अथवा जहाँ स्थान मिले खड़े होकर नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु, कहकर णमोकार मंत्र पढ़ें। पश्चात चत्तारि दंडक पढ़ें, इसके बाद स्वरुचि अनुसार कोई देव स्तुति पढ़ें।

दर्शन स्तवन के बीच-बीच परमात्मा के निर्विकार स्वरूप को निरख निरख कर निज शुद्ध ज्ञानमय स्वरूप का ध्यान करें और बार बार अपने सहज स्वभाव का स्मरण करें क्योंकि परमात्मा का स्वरूप और अपना सहज स्वभाव एक समान है। प्रभु स्वरूप को निरख कर अपने सहज स्वभाव की दृष्टि करना, प्रभु के अविकार स्वरूप को देखकर अन्तः प्रसन्न होकर अविकार सहज स्वभाव के ज्ञान स्पर्श का प्रयत्न होना दर्शन का प्रयोजन है। प्रतिदिन प्रभुस्वरूप का दर्शन कर अपने स्वभाव की उपासना करना आत्महित का उपाय है।

विनय व्यवहार

आपस में बड़े छोटों के बीच [illegible] बोलने का उचित [illegible] है। सब [illegible] अपने से बड़े, छोटों के प्रति [illegible]

नम्रता पूर्ण व्यवहार करना सो विनय व्यवहार है। प्रातः जागरण के बाद जो, जो, जब जब प्रथम मिले इस प्रकार वचनों से व्यवहार करना चाहिये।

माता पिता व विद्यागुरु को	प्रणाम
देव शास्त्र गुरु को	नमोस्तु
क्षुल्लक, ऐलक, आर्यिका को	वंदामि
ब्रह्मचारी को	वन्दना

अव्रती से छट्ठी प्रतिमाधारी तक को इच्छाकार अर्थात् जयजिनेन्द्र, जुहार, जयवीर इत्यादि पात्रता व इच्छा के अनुसार।

प्रमाण–नमोस्तु गुरवे कुर्या वन्दना ब्रह्मचारिणे।
इच्छाकारं सधार्मिभ्यो वंदामी आर्यिकादिषु ।।

अर्थ– गुरु के लिये नमोस्तु, ब्रह्मचारी के लिये वंदना, छट्ठी प्रतिमाधार तक साधर्मी को इच्छाकार व आर्यिका आदिकों में वंदामि व प्रयोग करें। विशेष–आर्यिकादिषु यह सप्तमी का बहुवचन है 'बहुवचन में' कम से कम ३ लिये जाते हैं सो आर्यिकादिषु कम से कम तीन लिये गये।

पुत्र को	सुखी रहो।
विद्या शिष्य को	ज्ञान वृद्धि हो।
दीक्षित शिष्य को	कल्याणमस्तु, धर्मवृद्धि, समाधिरस्तु इत्यादि अन्य शब्द भी हो सकते हैं।

विनय व्यवहार का प्रयोजन स्व पर शान्ति का लाभ व उन्नति का वातावरण है। अतः विनय व्यवहार करके अपने सत्पथ को निर्बाध बनाना आवश्यक है।

भगवान श्री आदिनाथ

अनगिनत वर्षों पहले जब तीसरे काल का बहुत थोड़ा समय बाकी रह गया था तब अयोध्या नगरी में १४वें कुलकर श्री नाभिराजा के घर श्री ऋषभदेव का जन्म हुआ था। कल्पवृक्षों के अभाव से प्रजा बहुत संकट में थी। तब श्री ऋषभदेव ने प्रजा को असि मसि, कृषि, वाणिज्य, शिल्प सेवा का उपाय व आहार-पान विधि का उपाय बताकर प्रजा में सुख शान्ति की रचना की थी इसी कारण लोग इन्हें ब्रह्मा भी कहते हैं। श्री ऋषभदेव के भरत चक्रवर्ती व बाहुबलि आदि १०१ पुत्र थे। भरत चक्रवर्ती के नाम पर इस क्षेत्र का नाम भरत व इस जन्मदेश का नाम भारतवर्ष प्रसिद्ध हुआ।

श्री ऋषभदेव धर्मयुग में सर्वप्रथम तीर्थंकर हुए इस कारण इनको आदिनाथ कहते हैं। इनके गर्भ व जन्म के अवसर पर इन्द्रदेव व देवियों ने महान उत्सव मनाया था। अनेकों वर्ष तक राज्य करने के पश्चात एक दिन ऋषभदेव के दरबार में नीलाञ्जना देवी नृत्य कर रही थी और वहीं पर उसकी मृत्यु हो गई, उसी समय तुरंत दूसरी देवी उसी प्रकार के वेश में नृत्य करने लगी। श्री महाराज ऋषभदेव अवधि ज्ञान से यह सब विनश्वरता जानकर संसार से विरक्त हो गये। तब ब्रह्मलोक (पांचवे स्वर्ग) से लौकान्तिक देवों ने

आकर उनके वैराग्य की प्रशंसा की। रिषभदेव ने वन में जाकर दी...
इन्द्रों ने, देवों ने, मनुष्यों ने बड़ा उत्सव मनाया। रिषभदेव ने छ महीने का अनशन व्रत ले लिया। छ माह बाद आहार के लिये चर्या की, पर छ माह तक आहार पान का योग न हुआ। पश्चात् रात्रि में राजा श्रेयांस को आहारदान विधि का स्वप्न हुआ। प्रभात होने पर आहार दान की तैयारी की। रिषभदेव को राजा श्रेयांस ने विधि पूर्वक इक्षुरस का आहार दान दिया। रिषभदेव ने अनेक वर्षों तक मौनपूर्वक तपश्चरण किया पश्चात उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हुई। देवेन्द्रों ने ज्ञान कल्याणक मनाया। देवेन्द्रों ने समवशरण की रचना की अनेक वर्षों तक प्रभु का दिव्यापदेश हुआ, अन्त में कैला पर्वत से श्री रिषभदेव भगवान ने निर्वाण पाया। इसी कारण रिषभदे प्रभु को कैलाशपति भी कहते हैं। निर्वाण के समय इन्द्रों ने निर्व कल्याणक भी मनाया था।

भगवान महावीर

इस अवसर्पिणी काल के चतुर्थकाल के अन्त में कुन्डलपु महारानी त्रिशला की कुक्षि से महावीर स्वामी ने जन्म लिया इ पिता राजा सिद्धार्थ थे। गर्भ व जन्म के अवसर पर इन्द्रों ने इ कल्याणक समारोह मनाया था। महावीर स्वामी का जन्मान्तः वर्द्धमान था। वर्द्धमान तीर्थंकर के जन्म समय इन्द्रों ने जन्मकल्या मनाया। वर्द्धमान शिशु को सुमेरुपर्वतपर पांडुकशिला के विराजमान करके इन्द्रों ने क्षीरसागर के निर्दोष जल से भरे

१००८ विशाल सुवर्णकलशों से वर्द्धमान का अभिषेक किया उस समय का बल देखकर इंद्र ने उन्हें वीर वीर कहकर उनकी भूरि भूरि भक्ति प्रशंसा की, तब से इनका नाम वीर प्रसिद्ध हुआ। बचपन में वर्द्धमान को देखकर दो मुनिराजों का शंका समाधान स्वयं हो गया था। तब से इनका नाम सन्मति प्रसिद्ध हुआ।

बालक वर्द्धमान तीर्थंकर अपने साथी मित्रों सहित उद्यान में बाललीलाकर रहे थे। उस समय एकदेव प्रभु के बल की, धैर्य की परीक्षा करने के लिये भयंकर साँप बनकर आया। उस समय सब साथी डरकर दूर भाग गये, पेड़ पर चढ़ गये। किन्तु वर्द्धमान बालक ने उस विघ्न रूप सर्प के पास जाकर उसे पकड़कर उस देव के गर्व को ध्वस्त कर दिया तब से इनका नाम महावीर प्रसिद्ध हुआ।

महावीर स्वामी ने गृहस्थावस्था अंगीकार न कर ३० वर्ष की अवस्था में जिन दीक्षा ग्रहण की तब इन्द्रों ने दीक्षा कल्याणक समारोह मनाया। मुनिराज वर्द्धमान ने अनेकों उपसर्ग सहे मौनपूर्वक अध्यात्मसाधना में रहे। उस साधना में किसी दिन एक रुद्र ने प्रभु पर बहुत कठिन उपसर्ग किये उससे प्रभु विचलित न हुये। तब प्रभु का नाम अतिवीर प्रसिद्ध हुआ। प्रभु को १२ वर्ष की मौनपूर्वक अध्यात्मसाधना के बाद केवल ज्ञान हुआ। इन्द्रोनें ज्ञानकल्याणक मनाया। समवशरण की रचना हुई। सर्वप्रथम विपुलाचल पर्वत पर प्रभु की दिव्यध्वनि हुई। इनके मुख्य गणधर गौतमस्वामी थे। श्रोताओं में मुख्य राजा श्रेणिक थे। अन्त में कार्तिक वदी अमावस्या के

प्रभात काल में महावीर स्वामी ने पांवापुर से निर्वाण प्राप्त किया। उसी दिन सायंकाल गौतम स्वामी गणधर कोकेवल ज्ञान हुआ। तभी से कार्तिकवदी अमावस्या को प्रातः व सायं दीपावली उत्सव मनाया जा रहा है। अन्तिम तीर्थंकर श्री महावीर भगवान को मन वचन काय से बारंबार नमस्कार हो।

भगवान श्री रामचन्द्र जी

बीसवें तीर्थंकर श्री मुनि सुव्रतनाथ के तीर्थकाल में अयोध्या नगरी में राजा दशरथ के पुत्र श्री रामचन्द्र जी हुए। इनकी माता का नाम कौशल्या था। श्री राम वलभ्रद पदधारी शलाका महापुरुष थे। बलभद्र श्री राम के भाई श्री लक्ष्मण नारायण थे, भरत व शत्रुघ्न भी उनके भाई थे। श्री राम न्याय प्रिय मर्यादापुरुषोत्तम थे। इनके व्यवहार से रघुवंश की बड़ी ख्याति हुई। जनक राजा ने अपनी पुत्री सीता के योग्य वर के चुनाव के लिये स्वयंवर रचा उसमें विकराल धनुष के तोड़ने का काम था। उस धनुष को श्री राम ने तोड़ा, सीता जीने श्री राम को वर माला पहिनाई।

कुछ समय बाद राजा दशरथ के वैराग्य जगा, उन्होंने श्री राम को राज्य देकर दीक्षा लेने का संकल्प किया। श्री भरत का भी चित्त जिन दीक्षा के लिए हो गया श्री राम को राज्याभिषेक करने के समय एक विचित्र घटना यह घटी कि भरत की माता कैकेयी ने राजा दशरथ से अपना धरोहर वाला वरदान माँगा कि भरत को राज्य दो। ऐसा वरदान लेने का कारण यह था कि जब राजा दशरथ

स्वयंवर में कैकेयी से पाणिग्रहण कर रथ में घर आने लगे तब अन्य राजाओं ने दशरथ पर आक्रमण किया। उस समय कैकेयी ने कुशलता से रथ हाँककर विजय प्राप्त करादी तब राजा दशरथ ने मनचाहा वर माँगने को कैकेयी से कहा। तब कैकेयी ने कहाकि हमारा वर अभी धरोहर रखो, जब हम चाहेंगे तब आप दे देना। कैकेयी ने इस अवसर से लाभ उठाया। बात क्या हुई कि उस समय राजा दशरथ व भरत दोनों ही विरक्त हो रहे थे तो कैकेयी ने यह सोचा कि हमें पति व पुत्र दोनों का वियोग सहना पड़ेगा। सो भरत के गृहबन्धन का यही उपाय समझा कि भरत को राज्याभिषेक किया जावे। राजा दशरथ ने भरत को राज्य दिया।

मर्यादापुरुषोत्तम श्री राम ने यह सोचकर कि मेरे रहते हुए प्रजा पर भरत का प्रभाव न बढ़ेगा सो १२ वर्ष वन में वास करने का संकल्प किया श्री राम के साथ भ्रातृभक्त श्री लक्ष्मण भी वन में गये। सीता भी श्री राम के साथ वन में गयीं। वन में अनेको कष्ट सहे। रावण ने सीता का हरण किया। राम रावण युद्ध हुआ। राम ने विजय पाई। सीता सहित श्री राम, लक्ष्मण माताजी के अनुनय अनुरोध पर अयोध्या आये। अयोध्या में कुछ वर्ष बाद एक धोबी धोबिन के झगड़े पर सीता को घर में रहने का अपवाद किया। मर्यादापुरुषोत्तम राम ने गर्भवती सीता को वन में छुड़वा दिया। १०, १२ वर्ष बाद सीता के पुत्र लवकुश से राम लक्ष्मण का युद्ध हुआ। वहाँ फिर सम्मेलन हुआ। सीता लवकुश सभी अयोध्या लाये गये।

फिर जनता जनार्दन को निःसंशय बनाकर धर्मरीति के लिए मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने सीता को अग्निपरीक्षा की आज्ञा दी सीता ने प्रभु स्मरण कर अग्नि में प्रवेश किया। अग्निकुंड सरोवर हो गया। फिर सीता अर्जिका हो गयीं। कुछ समय बाद दो देवों ने राम लक्ष्मण की प्रीति की परीक्षा के लिये विक्रिया से लक्ष्मण को राम मरण का वातावरण दिखाया तब लक्ष्मण हा राम कहकर मृत्यु को प्राप्त हुये। श्री राम मृत लक्ष्मण की देह को ६ माह तक लिये फिरे। उन्हें दो देवों ने अनेक दृश्य दिखाकर प्रतिबुद्ध करना चाहा अन्त में मृतक बैलों को गाड़ी में जोतने का दृश्य देखकर श्री राम प्रतिबुद्ध हुये। मृत देह का संस्कार करके श्री राम ने जिन दीक्षा ली और परम तपश्चरण करके माँगीतुंगी पर्वत से निर्वाण पद पाया। श्री राम भगवान को मन वचन कायसे बारंबार नमस्कार हो।

पूजन विधि

प्रातःकाल जगने के बाद प्रभुगुण नाम जपकर नित्य क्रिया से निवृत्त होकर स्नान कर शुद्ध वस्त्र पहन पूजाद्रव्य लेकर नंगे पैर जमीन देखते हुए हिंसा टाल मंदिरजी में जावें। वहाँ द्रव्य धोकर प्रभुमूर्ति का प्रक्षाल कर प्रभु के सामने बाईं ओर खड़े होकर या सामर्थ्य न हो तो बैठकर प्रभुपूजा प्रस्तावना विधिविधान से पढ़े। ॐ जय जय जय से स्वस्ति वाचन तक प्रभु पूजा की प्रस्तावना की जाती है। पश्चात् पूजा प्रारम्भ करे। पूजा में जिसकी पूजा की जा

रही हो उसके स्वरूप का ध्यान करें और अपने आप में घटित करें। इस कला पर पूजा की सफलता निर्भर है। पूजा के पाँच अंग है। आवाहन, स्थापन, सन्निधीकरण, पूजन, विसर्जन। प्रत्येक पूजा के प्रारम्भ के दो एक छन्दों में प्रथम तीन अंश आ जाते हैं। उनके मंत्रों में आवाहनम्, स्थापनम्, सन्निधिकरणम् भी बोला जाता है। पश्चात आठ द्रव्य से पूजा छंद मंत्र पढ़कर कर द्रव्य का निर्वाचन करें। पश्चात जयमाल पढ़कर अर्घ चढ़ाकर आशीर्वाद प्राप्त करें।

जितनी पूजा करनी हों, पूजा करके तथा अन्त में जितने अर्घ चढ़ाना हो अर्घ चढ़ाकर शान्ति पाठ पढ़े और अन्त में विसर्जन पाठ पढ़कर कायोत्सर्ग करके आरती करें। पश्चात कोई स्तुति पढ़कर पूजा कार्य समाप्त करें।

पूजक घर आकर अथवा उद्यम आरम्भ आदि कार्यों के समय भी प्रभुस्वरूप की श्रद्धा व धुन बनाये रहे प्रभुपूजा के भाव से महावीर स्वामी के समवशरण की ओर मुख में फूल की पांखुरी दाबे हुए मेंढ़क जा रहा था। वह श्रेणिक राजा के हाथी के पगतले दबकर मरकर स्वर्ग में देव हुआ और श्रेणिक राजा से पहले वह देव समवशरण में पहुंच गया। वहाँ उस देव ने प्रभु की खूब भक्तिकर पुण्यपार्जित किया, मुक्ति के उपाय की पात्रता बनाई। प्रभुपूजा अथवा प्रभुदर्शन प्रतिदिन करना श्रावक का कर्तव्य है।

सिद्ध क्षेत्रों का सहेतुक ज्ञान

मुनिराज परम तपश्चरण करके व आत्मरमण के प्रसाद से चार घातिया कर्मों के अभाव से अरहंत भगवान होते हैं वे अरहंत भगवान जिस स्थान से निर्वाण पाते हैं अर्थात शेष चार अघातिया कर्मों का अभाव होने से सदा के लिये देह रहित होकर सिद्ध लोक में पहुँचते हैं उस स्थान को सिद्ध क्षेत्र कहते हैं। तो अमुक सिद्धक्षेत्र होने का हेतु क्या है। ऐसा प्रश्न होने पर यह जानना चाहिए कि इस क्षेत्र से कौन भगवान सिद्ध हुए है। उसी का कुछपरिचय कराया जा रहा है।

किस क्षेत्र से — कौन मोक्ष गये

कैलाश पर्वत–श्री ऋषभदेव, नागकुमार तथा बालि, महाबालि आदि अनेकों मुनिराज।

सम्मेद शिखर जी–ऋषभदेव, वासुपूज्य, नेमिनाथ व महावीर स्वामी को छोड़कर शेष बीस तीर्थंकर व अनेकों अन्य मुनिराज।

चंपापुर–वासुपूज्य भगवान व अनेकों मुनिराज।

गिरनार–श्री नेमिनाथ, प्रद्युम्न कुमार, शम्बुकुमार, अनिरुद्ध आदि।

पावापुर–श्री महावीर स्वामी।

तारंगा–वरदत्त, सागरदत्त आदि ३ ½ करोड़ मुनिराज।

पावागिरि–लवकुश आदि ५ करोड़ मुनिराज।

शत्रुंजय–युधिष्ठर, भीम, अर्जुन आदि ८ करोड़ मुनिराज।

गजपंथा–सात वलभद्र, यादव नरेन्द्र आदि ८ करोड़ मुनिराज।

तुंगीगिर–राम, हनुमान, सुग्रीव, गव्य, गवाक्ष, नील, महानील आदि ६६ करोड़ मुनिराज।

सोनागिर–नंग कुमार, अनंग कुमार आदि ५ ½ करोड़ मुनिराज।

रेवातट–रावणसुत आदि ५½ करोड़ मुनिराज।

सिद्धवरकूट–दो चक्रवर्ती, १० कामदेव आदि ३ ½ करोड़ मुनिराज।

वड़वानीचूलगिर–इन्द्रजीत, कुम्भकर्ण आदि।

पावागिरिनगर–सुवर्णभद्र आदि मुनिराज।

द्रोणगिरि–गुरुदत्त आदि मुनिराज।

मेढ़ागिरि (मुक्तागिरि)–३½ करोड़ मुनिराज।

कुंथलगिरि–कुलभूषण, देशभूषण आदि मुनिराज।

कोटिशिला–जसरथ के पुत्र आदि मुनिराज।

रेसंदीगिरि–गुरुवरदत्त आदि मुनिराज।

मथुरा–जम्बूस्वामी आदि मुनिराज।

भगवान श्री नेमिनाथ

गत चतुर्थकाल में श्री पार्श्वनाथ भगवान से पहले सौरीपुर में श्री राजा समुद्रविजय के घर श्री शिवादेवी की कुक्षि से श्री नेमिनाथ स्वामी का जन्म हुआ। बलभद्र श्री बल्देव व नारायण श्रीकृष्णजी

Jain.pm3

इनके चचेरे भाई थे। एक सभा में श्री नेमिनाथस्वामी के बल की चर्चा चल रही थी इस परीक्षा में श्री नेमिनाथस्वामी के अंगुली को मोड़ने में सभी बलवान असफल हो गये इनके पराक्रम की चिन्ता से श्रीकृष्ण नारायण ने श्री नेमिनाथ जी के वैराग्य व वनवास का उपाय सोच लिया। श्री नेमिनाथ जी का विवाहसम्बन्ध जूनागढ़ के राजा उग्रसेनजी की सुपुत्री राजुलमती से निश्चित हुआ। वरयात्रा के दिन जूनागढ़ में मार्ग में पशुओं का घेराव कराया गया और सारथी को समझा दिया गया कि नेमिनाथस्वामी इस घेराव के विषय में प्रयोजन पूछें तो बताना कि बरात में राजाओं के भोजन के लिये घेरे गये हैं। निश्चित तिथिपर बरात चली। जूनागढ़ में घिरे हुये पशुओं के बारे में रथपर सवार वरराज श्रीनेमिनाथस्वामी ने सारथी को पूछा कि ये पशु बन्धन में क्यों डाले गये है। तब सारथी ने कहा कि बारात में आने वाले राजाओं के खाने के लिये इन्हें रोका है। यह सुनकर श्री नेमिनाथ स्वामी वापिस हो गये और जिनदीक्षा लेने के लिये गिरनार पर्वतपर चले गये।

राजुलमती ने जब स्वामीजी के लौट जाने का समाचार सुना तो एकदम सीधे खाजकर गिरनार पर्वत पर पहुँचीं। राजुलमतीने नेमिनाथ स्वामी को नवभव की प्रीति तथा अपनी अभ्यर्थना दिखाकर लौटने का अत्यधिक अनुरोध किया किन्तु श्री नेमिनाथ स्वामी ने ऐसा सत्य संबोधन किया कि राजुलमतीके भी भाव आर्यिका के व्रत लेने के हो गये। तब श्री नेमिनाथ स्वामी ने "ॐ नमः सिद्धेभ्यः" कहकर पंचमुष्टि से केशलुंच करके निर्ग्रन्थ पद धारण किया। और

श्रीराजुल मती ने श्री नेमिनाथ मुनीन्द्र के समक्ष आर्यिका के व्रतग्रहण किये। श्री नेमिनाथजी को केवलज्ञान हुआ। देवदेवेन्द्रों ने समवशरण की रचना की। वहाँ भगवान श्रीनेमिनाथ जी की दिव्यध्वनि खिरी। देव देवेन्द्र मनुष्य मनुष्येन्द्र पशु पक्षी सभी ने धर्म लाभलिया। अन्त में श्री गिरनार पर्वत से निर्वाण प्राप्त किया श्री नेमिनाथ भगवान २२ वें तीर्थंकर थे, वे चार घातिया कर्म नष्टकर वीतराग सर्वज्ञ परमात्मा हुये और अन्त में चार अघातिया कर्मों का नाशकर सिद्ध भगवान हुये। श्री नेमिनाथ भगवान को मन वचन काय से नमस्कार हो।

भगवान श्री पार्श्वनाथ

भगवान श्री महावीर स्वामी से पहले वाराणसी नगरी में श्री अश्वसेन राजा के घर श्री वामादेवी की कुक्षि से श्री पार्श्वनाथ का जन्म हुआ। पार्श्वनाथ के जीव का अम्बरीश ज्योतिषी देव का जीव पूर्व कई भवों से (मरुभूति व कमठ के भव से) वैरी होता चला आया। कमठका जीव पार्श्वनाथ का नाना सन्यासी हो कर पंचाग्नि तप तप रहा था। उस वन में पार्श्वनाथ कुमार अचानक वनविहार में पहुँचे। वहाँ पार्श्वनाथ जीने सन्यासी को समझाया यह हिंसा मय तप है। सन्यासी क्रुद्ध हुआ। पर्श्वनाथ स्वामी ने बताया देखो जिस लक्कड़ को तुम जला रहे हो उसमें नाग नागिनी का जोड़ा है। सन्यासी ने उस लक्कड़ को कुल्हाड़ी से फाड़ा तो उसमें नाग नागिनी निकले वे घायल हो गये थे। पार्श्वनाथ जी केदृष्टि प्रसाद से वे

मरकर धरणेन्द्र पद्मावती व्यन्तर देव देवी हुए। श्री पार्श्वनाथ स्वामी अनेक अनुरोधों के बाद भी संसार की असारता विचार कर विरक्त हो कर निर्ग्रन्थ मुनि हो गये। एक बार ध्यानस्थ श्री पार्श्वनाथ स्वामी को देखकर अम्बरीश ज्योतिषी के चित्त में बैर उमड़ आया और उसने विक्रिया से मूसलाधार वर्षा की, झंझा वायु का तूफान उड़ाया, ओले पत्थर बरसाये। उस समय धरणेन्द्र पद्मावतिने आकर भक्ति पूर्वक उनका उपसर्ग दूर किया, सिंहासन कमल पर विराजमान किया व ऊपर वृहत्काय फणावलि की छाया की। उस समय यह ज्योतिषी देव लज्जित और पराजित होकर प्रभु के चरणों में आया।

श्री पार्श्वनाथ स्वामी ने परम तपश्चरण के प्रसाद से चार घातिया कर्मों का नाशकर केवल ज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्त आनन्द व अनन्तबल प्राप्तकर भगवान अरहंत हुए। देव देवेन्द्रोंने समवशरण की रचना की। प्रभु की दिव्यध्वनि खिरी। देव देवी श्रावक श्राविका मुनि आर्यिका पशुपक्षी सभी ने धर्म लाभ लिया। अन्त में योग निरोध करके भगवान पार्श्वनाथ स्वामी ने सम्मेद शिखरजी पर्वत से निर्वाण पद प्राप्त किया २३ वें तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ भगवान को मन वचन काय से असंख्य नमस्कार हों।

राजा श्रेणिक

भगवान महावीर स्वामी के समकाल में राजगृही नगरी में राजा श्रेणिक हुए हैं। राजा श्रेणिक का विवाह चेलना से हुआ। रानी चेलना जैनधर्म की उपासिका थी और राजाश्रेणिक

बौद्धधर्मानुयायी था। परस्पर धर्मसंघर्ष कुछ घटनाओं के बाद एक ऐसी घटना घटी कि राजा श्रेणिक घोड़े पर सवारी कर वन में विहार कर रहे थे। अचानक उनकी दृष्टि एक मुनिराज पर पहुँची, राजा ने संघर्ष भावना से एक मरा हुआ सांप उन मुनिराज के गले में डाल दिया। तीन दिन बाद राजा ने रानी चेलना को यह वृत्तांत सुनाया। तब रानी बोली यह आपने कठिन उपसर्ग कर अनर्थ किया। राजाश्रेणिक बोले कि इसमें क्या उपसर्ग? मुनि तो सांप निकाल व फैंककर कहीं चले गये होंगे। रानी चेलना ने कहा नहीं, नहीं, यदि वे दिगम्बर मुनि राज हैं तो अभी भी वहीं उसी आसन से विराजें होंगे।

श्रेणिक और चेलना उन मुनिराज को देखने वन में गये। वहां वे मुनिराज उसी आसन से ध्यानस्थ बैठे थे। राजा के मन में बड़ा पछतावा हुआ। रानी ने नीचे शक्कर बिछाकर मृत सांप पर चढ़ी चींटियों को अलग कराया और उपसर्ग दूर किया। मुनिमहाराज ने उपसर्ग दूर होने के बाद सामने खड़े हुए श्रेणिक और चेलना को उभयोधर्मवृद्धिः कहकर एकसाथ आशीर्वाद दिया। मुनिराज की ऐसी परमसमता को देखकर जैनधर्म में अनुराग व अपनी करनी पर बड़ा पछतावाहुआ और सोचा कि मैं अपनी तलवार से अपनी गर्दन उड़ा दूं। क्यों मैंने ऐसा अनर्थ किया। तब मुनिराज ने संबोधा हे राजन् क्यों आत्मघात का चिन्तन करते हो, पावन अहिंसा धर्म को अंगीकार कर आत्मकल्याण करो। इस अन्तर्ज्ञान को देखकर श्रेणिकराजा जैन धर्म का परमउपासक हो गया और तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया।

राजा श्रेणिक महावीर भगवान की समवशरण सभा के मुख्य श्रोता थे इन्होंने मुनिराज के उपसर्ग के समय सातवें नरक की आयु स्थिति का बंध कर लिया था। पश्चात जिन धर्म की परमभक्ति के प्रसाद से सम्यक्त्व हुआ और आयु स्थिति घटकर प्रथमनरक की केवल ८४००० वर्ष की स्थिति रह गई। अब श्री श्रेणिक महाराज नरक से निकलकर यहाँ प्रथम तीर्थंकर होंगे।

दान विधि

अपने और पर के उपकार के लिये धन के त्यागने को दान कहते हैं। दान चार प्रकार के होते हैं—१-आहारदान, २-शास्त्रदान, ३-औषधिदान, ४-अभयदान। आहारदान दो प्रकार से होते हैं—(१) पात्रदान, (२) दयादान।

पात्रदान—मुनिआदि पात्रों को योग्य विधि सहित आहार देना पात्र आहारदान है। मुनिराज जब आहारार्थ चर्या को निकलते हैं तब वे दाहिने हाथ की अंगुलिका दाहिने कंधे को स्पर्श करने की मुद्रा में निकलते हैं उन्हें देखकर श्रावक श्राविका कलश आदि हाथ में लेकर या केवल हाथ जोड़कर "मुनिराज नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु अत्र तिष्ठः तिष्ठः, मन शुद्धि वचनशुद्धि, कायशुद्धि, आहारजल शुद्ध है गृहप्रवेश कीजिये" कहते हैं और श्रावक श्राविका घर में आगे चलते हैं और पीछे मुनिराज भी चलते हैं। गृह में पहुँचने पर एक काष्ठासन आदि शुद्ध आसन पर "उच्चासन पर विराजिये" कहकर मुनिराज को बिठाते हैं। वहां मुनिराज पहले अपने कमंडलु

से पैर धोकर उच्चासन पर बैठते हैं। श्रावकगण भक्ति से चरण धोकर पूजा करते हैं या अर्घ चढ़ाते हैं। पश्चात "भोजनशाला में पधारियें" कहकर श्रावक भोजनशाला में ले जाते हैं। वहां मुनिराज खड़े होते हैं तब आहार देने वाले श्रावक श्राविका "महाराज नमोस्तु मनशुद्धि, वचनशुद्धि कायशुद्धि आहारजलशुद्ध है, आहार ग्रहण कीजिये" कहते हैं। मुनिराज सिद्ध भक्ति करके अंजुलि बनाते हैं उसमें दाता पहिले जल देते हैं पश्चात आहार देते हैं। ऐसी ही विधि आर्यिका ऐलक क्षुल्लक व क्षुल्लिकाओं के लिये है। अन्तर इतना है कि इनको वंदामि कहा जाता है। ये बैठकर आहार लेते हैं, इनकी पूजा नहीं है ऐलक व आर्यिका पाणिपात्र में ही आहार लेते हैं, क्षुल्लक, क्षुल्लिका एक पात्र में आहार लेते हैं। अन्य योग्य पात्र श्रावक ज्ञानी जनों को भी उनके योग्य विधि से आहार देना पात्रदान है।

शास्त्रदान–मुनि आर्यिका आदि ज्ञानपात्रजनों की स्वपरज्ञान वृद्धि की भावना सहित शास्त्रदेना, उनको ज्ञान साधन जुटाना, पढ़ाना आदि सब शास्त्रदान हैं।

औषधिदान–रोगी जनों की चिकित्सा करना, औषधि देना, सेवा करना औषधिदान है।

अभयदान–ठहरने का आवास देना, प्रकाश देना, भयत्रस्त जीवों को सान्त्वना देना अभयदान है।

दयादान–भूखे पीड़ित असहाय जनों को भोजन कराना वस्त्रादि देना दयादान है।

आहारपान शुद्धि

जहाँ द्रव्य क्षेत्र काल भाव शुद्ध हों ऐसे भोजन प्रसंगको चौका कहते हैं। चौका में भोजन निर्माता स्नानकर शुद्धवस्त्र पहिने हों, भोज्य पदार्थ मर्यादा के अन्दर हो, तथा अस्पृश्य जनों व अस्पृश्य पदार्थों से छुवे हुए न हों। चौका का क्षेत्र सीमा से बद्ध हो ताकि चौका क्षेत्र की शुद्धि का ध्यान रहे चौकाक्षेत्र में कीड़ा मकोड़ा आदि का निर्गमस्थान न हो गोभी फूल आदि अभक्ष्य पदार्थ न हों, चौके में बिल न हो स्वच्छ व प्रकाश हो। सूर्य प्रकाश के समय चौका का कार्य हो। भोजन बनाने व देने वाले श्रावक श्राविकाओं के भाव पात्रदान करने के लिये विशुद्धि व उत्साह वाले हों, ईर्ष्या आदि दोष से रहित हों। ऐसी विधि पूर्वक आहारपान होने को आहार पान शुद्धि कहते हैं। आहार जल की मर्यादा का संक्षिप्त विवरण यह है।

गर्मी में ५ रात, शीत में ७ रात, वर्षा में ३ रात तक की मर्यादा वाले पदार्थ—आटा, पिसीहल्दी, पिसेमसाले, बिना पानी डाले बनाये गये लड्डू आदि। इससे अधिक रात गुजरने पर ये अभक्ष्य हो जाते हैं।

एक रात की मर्यादा वाले पदार्थ—घी में सिके पापड़, दही उबला हुआ पानी, उबला हुआ दूध, उबला हुआ गन्नारस आदि दूसरी रात आने पर ये अभक्ष हो जाते हैं।

दिन दिन की मर्यादा वाले पदार्थ—रोटी, शाक, पूड़ी, पकौड़ी बूंदी, पापड़, आदि।

दो प्रहर याने ६ घंटा की मर्यादा वाले पदार्थ–दाल, भात, मसाले से प्रासुककिया हुआ जल, मसाले के साथ पिसानमक आदि।

४८ मिनट की मर्यादा वाले पदार्थ–छना हुआ जल, छना दूध, पिसा नमक, मक्खन आदि।

कोटिभट श्रीपाल

चम्पापुरी के राजा अरिदमन के श्रीपाल नामक पुत्र थे। पूर्व दुर्दैववश श्रीपाल कुमारको कुष्ट रोग हो गया। कुछ समय बाद उनके ५०० साथी जनों को भी कुष्ट हो गया, इससे नगर में बेचैनी हो गयी। नगर वासियों ने अवसर पाकर राजा को व राजकुमार श्रीपाल को अपने कष्ट का निवेदन किया। श्रीपाल अपने साथियों सहित नगर से चलकर वन उपवनों में रहने लगे।

इसी समय उज्जैन के राजा पहुपाल ने अपनी सुरसुन्दरी पुत्री से जिसे एक साध्वीजी के पास शिक्षा दिलाई थी, कहा कि तुम अपना वर चुन लो सुरसुन्दरी की इच्छानुसार उसका योग्य राजकुमार से विवाह कर दिया गया। पश्चात राजापुहपालने अपनी द्वितीय पुत्री मैनासुन्दरी से जिसको एक आर्यिका जी से शिक्षा दिलाई थी, कहा कि तुम अपना वर चुन लो। तब मैनासुन्दरी ने कहाकि इस विषय में मैं कुछ नहीं कह सकती, आपका जो कर्तव्य हो सो करें, मेरा जो भाग्य होगा उसके अनुसार ही मेरा भविष्य है। तब राजा ने कहा कि मेरे करने से तेरा कुछ नहीं होगा क्या तू अपने भाग्य से ही

जी रही है मैना सुन्दरी ने वस्तु सिद्धान्त के अनुसार बताया कि कोई किसी का कुछ नहीं करता सब अपने अपने भाग्य से सुख दुःखपाते हैं। यह सुनकर राजा को प्रचण्ड क्रोध उत्पन्न हुआ और ऐसे व्यक्ति को देख निकाला जिसका शरीर कुष्ट रोग से गल रहा था। वह व्यक्ति था यही श्रीपाल। श्रीपाल के साथ मैनासुन्दरी का विवाह कर दिया। उस समय नगर के सभी लोग शोकाकुल हो रहे थे, किन्तु राजा के आगे किसी का वश नहीं चला। सती मैनासुन्दरी ने श्रीपाल की बहुत सेवा की। एक बार अष्टान्हिका के दिनों में मैनासुन्दरी ने सिद्धचक्र विधान किया, सिद्धयंत्र का रोज अभिषेक करती और गंधोदक को श्रीपाल व उनके साथियों के देह पर छिड़कती रही आठ दिन में श्रीपाल व सभी साथियों का कुष्ट रोग दूर हो गया तथा श्रीपाल की देह सर्वाधिक सुन्दर व कांतिमान हो गयी। पश्चात कई घटनाओं में अनेक जगह राज्य पाया, अनेक राज पुत्रियों से विवाह हुआ। अन्त में श्रीपाल विरक्त होकर निर्ग्रन्थ साधुहोकर परम अन्तर्वाह्य तप किया। शुक्ल ध्यान के प्रताप से चार घातिया कर्मों का नाशकर श्रीपाल महाराज अरहंत भगवान हुए और पश्चात चार अघातिया कर्मों को नष्टकर शरीर रहित होकर सिद्धभगवान हुए जो ज्ञानपुज्ज अनन्तानन्त कालतक लोकांत में विराज मान रहे अनन्त ज्ञान द्वारा सर्वविश्व के ज्ञाता रहते हुए अनन्त आनन्द मय रहेंगे। श्रीपाल भगवान को मन वचन काय से बारंबार नमस्कार हो।

सुकुमाल

उज्जैन नगर में सुरेन्द्रदत्त सेठ के सुकुमाल नाम का पुत्र था। वह शरीर से बहुत ही सुकुमार था। सुकुमाल का भोजन था कमलों में बसे हुए सुगंधित चावल का भात। सुकुमाल की शय्या इतनी कोमल रहती थी कि यदि उसमें कोई बिनोला रह जाय या सरसों का एक भी दाना पड़ा हो तो वह भी ऐसा गड़ता था कि उसे सहा नहीं जाता था। सुकुमाल रत्नों के प्रकाश में रहते थे। उन्होंने कभी दीपशिखा भी नहीं देखी थी। इनकी सुकुमारता का समाचार चारों ओर फैल गया था।

उस नगर के राजा ने भी सुकुमाल की सुकुमारता का समाचार जाना और वह सुकुमाल के घर पहुँचा। सुकुमाल के माता पिता ने राजा का बहुत आदर किया। राजा की दीपक से आरती की तो दीपशिखा की किरण न सही जाने के कारण वहीं पास बैठे हुए सुकुमाल के आंख से आँसू आ गया। जिस शय्यापर राजा बैठे थे उसी शय्या पर सुकुमाल भी बैठे थे, वहाँ एक सरसों का दाना सुकुमाल के नीचे आ गया तो सुकुमाल को कई बार आसन बदलना पड़ा। पश्चात अचानक राजा के आ जाने पर कमल वासित चावल में अन्य चावल मिलाकर भात बनाया जाने से जो भोजन राजा य सुकुमाल को परोसा गया उसमें से सुकुमाल ने छांट छांट कर एक एक दाना चावल का खाया इन तीनों बातों का रहस्य जानकर राजा को सुकुमाल की सुकुमारता का आँखों देखा परिचय हुआ।

एक बार सुकुमाल को प्रच्छन्न संबोधनमिला, और वैराग्य हुआ। सुकुमाल के माता पिता उसे बाहर कहीं भी आने जाने नहीं देते थे। सो रात्रि में साड़ियों में साड़ियों की गाठ बांधकर महल के बाहर लटकाकर उसके सहारे उतरकर सुकुमाल जी ने प्रभात ही उपवन में विराजमान एक मुनिराज से जिन दीक्षा ग्रहण की। सुकुमाल मुनि सर्वआरंभ परिग्रह के त्यागी आत्मध्यान में ऐसे लीन हुए कि एक बार पूर्वभव के वैरीजीव स्यालिनी ने अपने दो बच्चों सहित सुकुमाल मुनिराज के पैर व जंघा भक्षण किये, फिर भी महामुनि रंच भी आत्म ध्यान से च्युत नहीं हुए और उन्होंने समता से मरणकर सर्वार्थसिद्धि में जन्मलिया ये इस समय सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र हैं, वहाँ से चयकर मनुष्य पर्याय पाकर निर्ग्रन्थदीक्षा लेकर परम आत्म ध्यान के प्रसाद से निर्वाण पद प्राप्त करेंगे।

षोडष संस्कार

कुपथ से बचने और सन्मार्ग में रह सकने के ध्येय से गृहस्थ को १६ वार के संस्कारों से संस्कृत किया जाता है। उन १६ संस्कारों के संक्षिप्त लक्षण ये हैं।

१-गर्भाधान संस्कार-मासिकधर्म की समाप्ति के बाद शुद्ध होकर गर्भाधान से पहिले अर्हंतदेव की पूजा द्वारा जोमात्रिक संस्कार होता है उसे गर्भाधान संस्कार कहते हैं।

२-प्रीति संस्कार-गर्भाधान के तीसरे महीने में अरहंतदेव की पूजाकर दरवाजे पर तोरण बांधना, दो पूर्णकलशों की स्थापना करना, शिशुजन्म पर्यंत समारोह करना।

३-सुप्रीति संस्कार-गर्भाधान से ५वें महीने में प्रीति संस्कार की क्रियाओं को पुनः समुदाय द्वारा किया जाना।

४-धृति संस्कार–गर्भाधान से ७ वें महीने में वाद्यप्रयोग आदि द्वारा संरक्षक समुदाय द्वारा पूजन करना आदि।

५-मोद संस्कार–गर्भाधान से ९वें महीने में परिजन संबंधी जनों द्वारा पूजा करना, गर्भिणी के शरीर में मात्रिकाबंध आभूषण पहिनाना, मंगलाचार करना आदि।

६-प्रियोदभ्व संस्कार–शिशुजन्म के पश्चात् होने वाली योग्य विधियां।

७-नामकरण संस्कार–जन्म से १२वें दिन में या कुछ और दिन पश्चात् शुभ मुहूर्त में संरक्षकों द्वारा पूजाविधान यथायोग्य दान देते हुए प्रभु के १००८ व अन्यशुभ नामों में से घटपत्र विधि से शिशु का नाम धरना।

८-वहिर्यान संस्कार–शिशु जन्म से दूसरे तीसरे व चौथे महीने में शुभ दिन में मांगलिक वाद्यपूर्वक शिशु को बाहरलाना भाई, बहन, चाचा, मौसी बुआ आदि द्वारा शिशु को पारितोषक दिया जाना।

९-निषद्या संस्कार-शिशु के कुछ बड़ा होने पर सद्गृहस्थ द्वारा अर्हत्पूजा आदि मांगलिक क्रियाओं के साथ ही बालक को घर में लम्बी चौड़ी शय्या पर बिठाया जाना।

१०-**अन्नप्राशन संस्कार**–शिशु के आठ महीना का होने अरहन्पूजा क्रिया के साथ शिशु को अन्न खिलाने का प्रारंभ करन

११-**व्युष्टिसंस्कार**–शिशु के एक वर्ष का होने पर आयो पूर्वक वर्षगांठ मनाना।

१२-**केशवाय संस्कार**–व्युष्टि संस्कार के बाद किसी शुभ माता पिता आदि जिन पूजा करके बालक के सिर के बालों का क करावें, बालक को स्नान करावें, गुरुजनों के पास ले जाकर बा से प्रणाम करावें, गुरुजनों से आशीर्वाद दिलावें।

१३-**लिपिसंख्यान संस्कार**–बालक के पांच वर्ष का होने बाद शुभ दिन में पिता आदि संरक्षक द्वारा जिन पूजा करके अ ज्ञान की क्रिया कराना, यथाशक्ति दान देना, बालक को गुरु स विद्याध्यन के लिये ले जाना।

१४-**उपनीत संस्कार**–आठ वर्ष का होने पर बालक से करा कर संरक्षक अष्टमूल गुण का नियम दिलाकर यज्ञोप पहिनावे, यथाशक्ति दान देवे, विवाहसंस्कार तक ब्रह्मचर्यधारण क सादापोशाक पहिनावे।

१५-**व्रतचर्या संस्कार**–उपनीत संस्कार के पश्चात् ब्रह्म सूचकचिन्ह कमरसूत्र, शिरमुंडन आदि रखना, अणुव्रत के अन्य नियम पालना जैसे-पान न खाना, उबटन न लगाना विद्याध्ययन काल तक करना।

१६-**व्रतावतरण संस्कार**–बालक के १८ वर्ष से अधिक

होने पर देवशास्त्रगुरु साक्षीपूर्वक न्यायपूर्वक गृहस्थोचित नियम दिलाना, पहले व्रतचर्या में लिये गये विशेष नियमों व चिन्हों का परिहार करना। इस संस्कार के बाद विवाहित होकर श्रावकोचित व्रतों का पालन ग्रहस्थावस्था तक करना।

जैनपर्वों का सहेतुक ज्ञान

वीरशासन जयंती–सावनवदी १ के दिन भगवान महावीरस्वामी की सर्वप्रथम दिव्यध्वनि खिरी थी।

रक्षाबन्धन–सावन सुदी १५ को हस्तिनापुर में बलिद्वारा कृत अकंपना चार्य संघ के ७०१ मुनियों पर घोर उपसर्ग को श्रीविष्णुकुमार मुनि ने अपने ऋद्धि व विद्याबल से दूर किया था तब वात्सल्य रूप में रक्षाबंधन की प्रथा चली।

षोडशकारण पर्व–भादोंवदी १ से असोज वदी १ तक माघवदी १ से फागुनवदी १ तक, चैतवदी १ से वैशाखवदी १ तक तीर्थंकर प्रकृतिबंध के कारणभूत १६ भावनाओं की उपासना की जाती है।

दशलक्षण पर्व–भादोंसुदी ५ से १४ तक, माघसुदी ५ से माघसुदी १४ तक, चैत्रसुदी ५ से चैत्रसुदी १४ तक उत्तमक्षमा मार्दव आर्जवशौच सत्य संयम तप त्याग आकिंचन्य व ब्रह्मचर्य इन दश धर्मों की उपासना की जाती है।

रत्नत्रय धर्म–भादोंसुदी १३ से १५ तक, माघसुदी १३ से

माघसुदी १५ तक, चैत्रसुदी १३ से चैत्रसुदी १५ तक सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र की अनशनपूजाविधान आदि विधिपूर्वक उपासना की जाती है।

क्षमावाणी पर्व–असौजवदी १ को पूजाविधान के बाद वर्षभर के अपराधों की परस्तयाचना करके वात्सल्य व आत्मोद्धरण का पौरुष किया जाता है।

अष्टाह्निका पर्व–कार्तिकसुदी ८ से १५ तक, फागुनसुदी ८ से १५ तक, अषाढसुदी ८ से १५ तक देवगण नन्दीश्वर द्वीप में पूजन करते हैं, मनुष्य अकृत्रिम जिनविम्ब की अपने क्षेत्र में उन जिनविम्बों की स्मृति करते हुए पूजन करते हैं।

दीपावलि–कार्तिकवदी अमावस्या को प्रातः भगवान महावीरस्वामी का निर्वाण हुआ व इसीदिन सायं गौतम गणधर को केवल ज्ञानलक्ष्मी प्राप्त हुई थी।

ऋषभनिर्वाण–माघवदी १४ को भगवान ऋषभदेव को निर्वाण प्राप्त हुआ था।

वीरजयन्ती–चैत्रवदी १३ के दिन अन्तिम तीर्थंकर श्री महावीरस्वामी का जन्म हुआ था।

अक्षयतृतीया–वैसाखसुदी ३ के दिन श्री ऋषभदेव को मुनिव्रत धारण के १ वर्ष बाद राजा श्रेयांसने इक्षुरस का आहारदान दिया था।

श्रुतपंचमी–महावीरस्वामी के निर्वाण के पश्चात् सैकड़ों वर्ष

तक मौखिक ही तत्वबोध चलता रहा। पश्चात् सर्वप्रथम षटखंडागम की रचना लिखित हुई उसका उद्घाटन व पूजन जेठसुदी ५ को हुआ था।

गुरुपूर्णिमा–अषाढ़सुदी १४ को मुनिगण वर्षायोग स्थापित कर लेते हैं तब श्रावक भक्तजन अषाढ़सुदी पूर्णिमा को उन गुरुवों के पास जाकर उनका पूजनवंदन करते हैं।

समन्तभद्राचार्य

स्वामी समन्तभद्र दक्षिण भारत में उरगपुर के क्षत्रिय राजा के पुत्र थे। वे स्वपरहित की भावना के अनुराग के कारण घर गृहस्थी राज्यवैभव के मोह में न फंसकर गृह त्यागकर दक्षिण काशी में जाकर दिगम्बर जैन साधु होकर ज्ञान साधना में समय व्यतीत करने लगे। थोड़े ही समय में उन्होंने सिद्धांत, न्याय, व्याकरण, काव्य, छन्द, अलंकार, ज्योतिष, वैद्यक आदि नाना विषयों में पाण्डित्यपूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया। जिसका प्रमाण इन्हीं विषयों पर अलौकिक तथा विशाल रचनायें हैं। वे प्रत्येक विषय पर वाद करने में समर्थ थे।

स्वामी समन्तभ्रद ने जैन धर्म के प्रसारार्थ पटना, मालवा, सिंध, पंजाब, गुजरात, बिहार आदि अनेक प्रान्तों में बिहार किया था। उस समय यत्र तत्र वे "जैन निर्ग्रन्थवादी" नाम से प्रसिद्ध हुए। उनके वचनों में पक्षपात नहीं था। वे विद्वानों को निष्पक्ष दृष्टि से स्वपर सिद्धान्तों पर खुला विचार करने का पूरा अवसर देते थे।

Jain.pmd

इतना सबकुछ होते हुए एक समय स्वामी समन्तभ्रद के जीवन में भस्मक रोग के आक्रमण की घटना घटी। कुछ दिनों बाद क्षुधाग्नि शरीर के रक्त मांस को जलाने लगी। क्षीणकाय शरीर देखकर उनके गुरु ने जब इसका कारण पूछा तो स्वामी जी ने भस्मक रोग का आक्रमण कारण स्पष्ट बता दिया, साथ ही गुरु से सल्लेखना धारण की आज्ञा मांगी। चूंकि स्वामी समन्तभद्र उस समय अल्पवयसक थे, उनके द्वारा जैनशासन के प्रचार की अत्याधिक आशा थी, अतः इन सब बातों पर विचार करके गुरु ने स्वामी जी को मुनिधर्म छोड़कर रोगनिवारण के उपाय के खोजने का आदेश दिया। चूंकि गुरु का आदेश था, वह तो मानना ही था, किन्तु मुनिधर्म उनको कितना प्रिय था, इसका पता इसी बात से चल जाता है कि जीवन से भी अत्यन्त प्रिय दिगम्बर साधुपद का त्याग करके जब स्वामी जी ने गेरुवा वस्त्र पहिने उस समय उनके आँखों में आंसू आ गये थे स्वामी जी अन्तरंग में निर्मल सम्यक्त्व को धारण किये हुए ऊपर से शैव साधु का भेष बनाकर रोगनिवारण की खोज में यत्र तत्र भ्रमण करने लगे। अन्त में एक शिवमंदिर में प्रचुर पकवान व मिष्ठान्न पाते रहने से कुछ दिनों में रोग का समूल नाश हो गया।

रोग निवारण के पश्चात् अपने गुरु से प्रार्थना कर स्वामी जी ने पुनः मुनिदीक्षा ग्रहण की। तदनंतर स्वामी समन्तभ्रद ने अनेक विषयों पर अनेक ग्रन्थ रत्नों की रचना करके जिन वाणी का उद्धार किया। उनकी अनेकों रचना अब भी उपलब्ध है, किन्तु सबसे बड़ा ग्रन्थ मोक्ष शास्त्रपर "गंधहस्तिमहाभाष्य" टीका है जोकि इस समय

है जो उपलब्ध है और उस पर भी श्री अकलंकदेव रचित अष्टशती व उसपर विद्यानन्द स्वामी रचित अष्ट सहस्त्री नाम की बड़ी टीका है।

आचार्य स्वामी समन्तभद्र ने इस भारतभूमि को विक्रम की तीसरी शताब्दी में पवित्र किया है। उनके अवतार से भारत का गौरव बढ़ा है।

।। इति ।।

परमात्मा आरती

(प्रत्येक धार्मिक शिक्षालयों में-सामूहिक प्रार्थना के लिये)

ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः,
णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं।।

ॐ जय जय अविकारी।

जय जय अविकारी, स्वामी जय जय अविकारी।
हितकारी भयहारी, शाश्वत स्वविहारी।ॐ।।टेक।।

काम क्रोध मद लोभ न माया, समरस सुखधारी
ध्यान तुम्हारा पावन, सकल क्लेशहारी।ॐ।।१।

हे स्वभावमय जिन तुम चीना, भव संतति टारी।
तुम भूलत भव भटकत, सहत विपति भारी।ॐ।।२।।

परसंबंध बंध दुख कारण, करत अहित भारी।
परम ब्रह्म का दर्शन, चहुँगति दुखहारी।ॐ।।३।।

ज्ञानमूर्ति हे सत्य सनातम, मुनि मन संचारी।
निर्विकल्प शिवनायक, शुचि गुन भंडारी।ॐ।।४।।

बसो बसो हे सहज ज्ञानधन, सहज शान्तिचारी
टलैं टलैं सब पातक, परबल बलधारी।ॐ।।५

हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम।
ज्ञाता दृष्टा आतमराम ।। टेक ।।
अन्तर यही ऊपरी जान,
वे विराग यहं राग वितान।
मैं वह हूँ जो हैं भगवान,
जो मैं हूँ वह हैं भगवान ।। १ ।।
मम स्वरूप है सिद्ध समान,
अमित शक्ति सुख ज्ञान निधान।
किन्तु आशवश खोया ज्ञान,
बना भिखारी निपट अजान ।।२।।
सुख दुःख दाता कोई न आन,
मोह राग रुष दुःख की खान।
निजको निज परको पर जान,
फिर दुःखका नहिं लेश निदान ।।३।।
जिन शिव ईश्वर ब्रह्मा राम,
विष्णु बुद्ध हरि जिसके नाम।
राग त्यागि पहुँचू निज धाम,
आकुलताका फिर क्या काम ।।४।।
होता स्वयं जगत परिणाम,
मैं जगका करता क्या काम।
दूर हटो परकृत परिणाम,
'सहजानन्द' रहूँ अभिराम ।।५।।

धर्म बोध पूर्वार्द्ध

धर्म बोध उत्तरार्द्ध

धार्मिक स्फुट ज्ञान पूर्वार्द्ध

धार्मिक स्फुट ज्ञान उत्तरार्द्ध

छहढाला टीका

द्रव्य संग्रह टीका

अध्यात्म सिद्धान्त

मोक्ष शास्त्र टीका

अध्यात्मसूत्र सार्थ

सम्यक्त्व लब्धि

लघु जीवस्थान चर्चा

द्रव्यसंग्रह प्रश्नोत्तरी टीका

जीव स्थान चर्चा

पञ्चास्तिकाय सार्थ

न्यायनिर्दर्शिनी

गुणस्थान दर्पण

समाधितंत्र सार्थ

लघु कर्मस्थान चर्चा

प्रवचनस्तर सार्थ

अध्यात्मसहस्री

कर्मक्षपणदर्शन

समयसार आत्मख्याति सहित

नयचक्र संग्रह

☞ मूल्य व अन्य पुस्तकों हेतु सूची पत्र मंगाएँ।

साहित्य मिलने का पता—

सहजानन्द शास्त्र माला

185—A रंजीतपुरी, सदर मेरठ—1

एवं

सहजानन्द शास्त्र माला बिक्री केन्द्र

श्री दिगम्बर जैन बड़ा मन्दिर

हस्तिनापुर